सोने का चाकू

हिन्दी ADDA

अखिलेश

सोने का चाकू

उनकी चार औलादें थीं। जाहिद, ताहिर, मुजाहिद और फ़ाकिर। फ़ाकिर के सिवा बाक़ी सभी सयाने हो गए थे। इस शहर में उन्हें नवासा मिला था, क्योंकि नाना की इकलौती

औलाद का इंतकाल हो गया था। वैसे कहने वालों की ज़बान पर कोई ताला नहीं लगा सकता। लोग कहते हैं कि मीर साहब ने अपने मामा को ज़हर दिलवा दिया था।

मीर साहब ने मामा की मल्कियत सँभाली तो उनके सामने सबसे बड़ी लेकिन प्रमुख समस्या थी, रोब ग़ालिब करने की। नतीज़ा यह हुआ कि बेक़सूर लोगों पर...जुल्म बढ़ चला। उनके अत्याचार की एक ख़ास अदा थी। वे रियाया को गुबंद में बँधवाकर पीटते थे। ख़ैर, अब तो वह बुलंद ज़माना ही चला गया। जिसका उन्हें बहुत दुःख था।

उन्होंने यहा आकर एक और काम किया, तवायफों में अपना विशेष स्थान बनाया। तवायफों के बीच उनका इतना दबदबा था कि उनकी ज़िद पर हीरा बाई ने चाँद(अवध प्रांत का एक क़स्बा, जहाँ की वेश्याओं के सम्मान में प्रांत की अन्य वेश्याएँ उनके सामने घुँघरु तक नहीं बाँधती) में घुँघरु बाँध लिया था। लौटने पर उसे बिरादरी से इतनी फटकार मिली कि वह फूट-फूटकर रोने लगी। तभी मीर साहब खाँसते हुए सीढ़ियाँ उतर गए थे।

सच्चाई यह थी कि उनसे वे सभी भयंकर घृणा करती थीं। वे महफ़िलों में मुफ़्त बुलाते जबकि दोस्तों में हज़ार रुपए में बुलाने का ऐलान करते। उन सबका मन करता कि मीर साहब को कोड़ों से इतना पीटें कि उनके कपड़े तार-तार हो जाएं। मगर वे मज़बूर थीं, क्योंकि उन्हीं की बिल्डिंग में वे सभी सस्ते किराए पर किराएदार थीं।

मीर साहब को शिकस्त दी मदीना ने। मदीना के बूढ़े अब्बा नन्हें मियाँ मस्जिद की बग़ल में लालटेन बनाने का काम करते थे। मदीना बहुत सुंदर थी। गेहुँवन रंग वाले चहरे पर तैरती हुई-सी गहरी-गहरी आँखें। वह बेहद भावुक लेकिन इरादे की पक्की थी। मीर साहब ने उससे प्रेम किया। बड़े-बड़े वायदे किए। फिर ज़िना किया। फिर अपनी ज़िंदगी से भगा दिया। मगर अगले ही दिन मदीना उनके बँगले पर पहुँच गई। मीर साहब ने गुस्सा दिखाया तो उसने उनका मुँह नोच कर लहू-लुहान कर दिया और घर में ज़बरन घुस गई। तब से वहीं रह रही है। बीवी की मौत के बाद कुछ दिनों की जद्दोजहद से उसने मीर साहब को निकाह के लिए राज़ी कर लिया। इतने दिनों के साथ ने उनके मन में भी लगाव पैदा कर दिया था। वे पिघल गए। शादी करने के साथ-साथ मदीना से माफ़ी भी माँगी। मदीना को मीर साहब के रुप में जैसे कोई पैगंबर मिल गया हो। वह जन्नत में पहुँच गई हो। मुजाहिद और फ़ाकिर उसी से पैदा हुए।

जाहिद भट्ठा चलाते थे। ताहिर ठेकेदारी करते थे पर असल धंधा तस्करी था। मुजाहिद जनरल स्टोर्स की दुकान देखता। फ़ाकिर हाई स्कूल में पढ़ता था। स्कूल से लौटने के बाद दुकान पर मुजाहिद की मदद करता।

जाड़े की शाम थी। चहल-पहल को ठंडक ने सोख लिया। सड़कें ख़ाली-ख़ाली और वातावरण वीरान लगने लगा। मुजाहिद ने बीरु चायवाले से स्पेशल चाय बोल दिया फिर अलमारी से गिरने-गिरने को हुए सामानों को ठीक किया।

दो-एक मिनट बीता होगा, एक ग्राहक आ गया, "स्टोव की एक पिन चाहिए।"

वह उठकर पिन ले आया। शुरु में उसे ऐसे ग्राहकों से बड़ी खीझ होती थी। वे पाँच पैसे के लिए उठने की जहमत कराते थे। पर मालूम नहीं कैसे अब्बा ने इस खीझ को भाँप लिया था, " देखिए हजरत, इस तरह तिजारत नहीं हो पाती, उसके लिए तहजीब और मशक्कत की ज़रुरत होती है। समझे! और यह जो खाली वक़्त में बैठ जाते हो, ऐसे काम नहीं चलेगा। खड़े रहा करो। तभी ख़रीदार आयेंगे।"

उसे तिजारत का तरीका आता भी कैसे, अभी उसकी उम्र भी क्या थी! अठारह वर्ष।

अब्बा और भाइयों की लापरवाही से वह बिगड़ गया था। कोई टोकने वाला था नहीं। स्कूल से भागने लगा। सिनेमा,चाय और जुआ उसके शौक़ बन गए।

अब्बा को दौलत इकट्ठी करने का नशा तो था ही, उस पर इंटर में मुजाहिद का दो बार फेल हो जाना। उन्होंने उसकी पढ़ाई छुड़ा दी। क़स्बाई शहर में हिसाब से बेहतरीन दुकान खुलवाकर उसे बैठा दिया कहा, "प्राइवेट इम्तिहान दिया करिए।"

अब तो उसका मन कुछ लगने लगा वर्ना पहले उसे दुकानदारी कालकोठरी लगती, जिसमें वह अकेला क़ैद कर दिया गया हो। उसका दिल सड़कों पर घूमने और दोस्तों के बीच बतियाने को मचलता।

बीरु चाय का गिलास रख गया। इस बीच चार-छः अच्छे ग्राहक आए थे। आख़िर में एस.डी.ओ. का चपरासी उनके छोटे से बच्चे के साथ आया था। मुजाहिद ने सामान अच्छी तरह पैक किया बच्चे को मुफ्त में टाफ़ी देकर मुस्कराया, "पापा से मेरा सलाम बोलना।"

अब वह दुबारा ख़ाली हो गया। चाय की चुस्कियाँ लेते हुए सड़क पर बैठे रफ़ीक मियाँ को देखने लगा। वे खंभे की टेक लेकर बाँसुरी बजा रहे थे।

रफ़ीक़ मियाँ बाँसुरी बेचते थे। वे मैले-फटे कपड़े पहने अधपके बाल-दाढ़ी वाले अधेड़ आदमी थे। बाँसुरी बजाकर ग्राहकों को मुतअसर करते थे। बजाने में उनका आस-पास तक में कोई जवाब न था। वे बजाते तो कभी-कभी राह चलते पारखी लोग थक कर घंटो खड़े रहते।

रफ़ीक़ मियाँ के बारे में वह अक्सर सोचता है कि वे खाते-पीते कैसे हैं? पूरे दिन में मुश्किल से चार-पाँच बाँसुरियाँ बिकती होंगी। कभी-कभी वे भी नहीं...

उसका दिमाग़ वहाँ से हट गया। एक डिग्री कॉलेज के प्रिंसिपल साहब आए थे, वे कॉलेज में खेल-कूद का ज़िम्मा भी अपने पर लिए थे। वे अब्बा के दोस्त थे और प्रायःबिना खेल-कूद का सामान लिए ख़ूब सारे सामानों का बिल बनवाते। उसने आठ सौ तैंतीस रुपए बयालीस पैसे का बिल बना दिया।

शाम रात में तब्दील होने वाली थी। मस्जिद से इशा की नमाज़ सुनाई दे रही थी। थोड़ी देर बाद अब्बा भी घुमते-टहलते आते होंगे।

वह चुस्त होकर काम करने लगा। वह इस कोशिश में भी था कि चेहरे पर रौनक और खुलापन आ जाए।

अब्बा को लेकर उसे बहुत शिक़ायत थी। वे उससे, दूसरे भाई लोगों से यहाँ तक कि अम्मी से भी मुहब्बत से बात नहीं करते। एक दफा उसने अम्मी से इसकी वजह पूछी थी। उन्होंने उदास होकर कहा था, "तुम्हारे अब्बा खुदाई नुमाइंदे हैं। उन्हें फ़ुर्सत कहाँ है? उनका दीन तो नमाज़, कुरान पढ़ना और काफ़िरों के ख़ात्मे-ख़ातिर दौलत इकट्ठी करना है।"

उसका जी घबड़ाने लगा। फ़ाकिर अभी तक नहीं आया। अब्बा की ओर से हिदायत थी कि फ़ाकिर स्कूल से लौटकर दूकान पर बैठा करे। पर फ़ाकिर जी चुराता था। मुजाहिद ने अपने तकलीफ़ को सोच कर उसे छूट दे रखी थी कि वह घूमे-फिरे मगर अब्बा के आने के टाइम पर पहुँच जाए। अब्बा के आने का समय...

फ़ाकिर आता दिखा। उसको चैन मिला। वह गुनगुनाने लगा। तभी उसका ध्यान रफ़ीक़ मियाँ पर चला गया, जो ठिठुरा देने वाली ठंडक में खुले आसमान के नीचे पड़े थे। उसने सोचा, उन्हें भी चाय पिला दे मगर ऐसा कर न सका, क्योंकि पहले वह रफ़ीक़ मियाँ को चाय पिला देता था। पर एक दिन अब्बा को मालूम हुआ तो डाँटा,

"इन्हें मुँह नहीं लगाना चाहिए। जिसके ऊपर खुदा रहम नहीं करता उस पर रहम करना खुदा से ख़िलाफ़त करना है।"

उसके मन में आया कि उनसे पूछे, फिर क्यों खैरात बाँटने के लिए जलसा करते हो। भीख देने के लिए डिब्बा भर दो-दो पैसे के सिक्के दुकान में रखने को कहते हो।

उसने रफ़ीक़ मियाँ को उनकी हालत पर छोड़ दिया। अपने और फ़ाकिर के लिए चाय मँगाई। दोनों चाय पीने लगे।

सुबह का निकला मुजाहिद रात को दुकान बढ़ा कर घर पहुँचा। अब्बा मौजूद थे। तकिये के सहारे अधलेटे हुक़्क़ा गुड़गुड़ा रहे थे। उसने पूरे दिन की बिक्री की रकम सामने रख दी। उन्होंने चश्मे के भीतर से आँखें उठाकर रुपयों को देखा। थोड़ी देर बाद उठाकर अलमारी में रखा फिर लौट कर पैर झाड़ कर चारपाई पर बैठ गए। और हुक़्क़ा गुड़गुड़ाने लगे। मुजाहिद के लिए नौकर नाश्ता रख गया। वह अब्बा की मौजूदगी झेलते हुए नाश्ता करने लगा। उसे भूख लग जाती थी।

मीर साहब ने फटकारा, "अहिस्ता-अहिस्ता खाइए। भागा नहीं जा रहा है। बद्तमीज कहीं के।" वे ऐनक पोंछ कर अख़बार पढ़ने लगे।

भीतर से कूकर की सीटी की आवाज़ आ रही थी।

वह भीतर जाने लगा तो अब्बा ने चश्में के अंदर से घूर कर उसे रोक दिया, "इंटीमेट के लिए कितने का आर्डर दिया गया?"

"डेढ़ हज़ार का।"

"और आज मुझे कितना रुपया दिया आपने?"

उसने मन ही मन कहा, "गिना तो था आपने", लेकिन बोला, "चौबीस सौ ग्यारह।"

अब्बा ने चश्मा उतार कर उसे घूरा। फिर 'हुम' कहकर धीरे से चश्मा पहना और अख़बार सामने कर लिया।

अंदर आ कर उसने हाथ-पैर वग़ैरह धोया। तौलिए से मुँह पोंछते हुए अम्मी के कमरे में आया और उनकी चारपाई के पायताने बैठ गया।

अम्मी ने उसे प्यार से झिड़का कि वह आराम से क्यों नहीं बैठता। वह उदास दिख रही थीं। उनकी गऊ-सी आँखें फूली हुई थीं। आँखों के नीचे चमड़ी खुश्क हो गई थी।

हर दिन की तरह आज भी घर में एक मनहूसियत-सी छाई हुई थी। अजीब लगता था, जैसे कोई बिना आवाज़ के सिसक रहा हो।

उसने अम्मी को पान थमा दिया। वह उनके लिए रोज़ बाज़ार से लजीज पान लगवाकर लाता था। अम्मी पान की गिलोरी मुँह में डाल कर कहीं खो गईं। उनकी आँखें कमरे की छत पर टिकी थीं।

इस बीच बड़ी भाभी दो बार कमरे में झाँक चुकी थीं। मुजाहिद को यह चीज़ बहुत चुभती थीं। इस मकान को जाने किसकी बद्दुआ लगी थी, किसी को चैन नहीं था। सब एक दूसरे को शक़ और नफ़रत की निगाहों से देखते थे। दीवारें पुतती थीं। दरवाज़े मज़बूत किए जाते थे। पर जज्बात स्याह हो रहे थे। दिल और दिमाग़ अपाहिज हो रहे थे।

अम्मी ने भाँप लिया कि दुल्हन का इस तरह झाँकना उसे नागवार लगा। उन्होंने समझाया, "बेटे, इसमें इसकी ग़लती नहीं है। दरअसल इस घर की बुनियाद ही ऐसी है जिस पर शक़, नफ़रत, बेचैनी बदनीयती का ही फूल खिल सकता है।" वह थोड़ी देर चुप रहीं फिर साँस छोड़ती हुई बोलीं, "हाँ इस पर कभी ख़ूबसूरत फूल नहीं खिल सकता। कभी नहीं।"

माहौल काफ़ी गंभीर हो गया। उसे लगा, अम्मी की तसल्ली के लिए कुछ कहना चाहिए। मगर उसे एक भी हरफ़ नहीं सूझ रहा था। वह असफलता को छिपाने के किए चादर का कोना मरोड़ने लगा।

उन दोनों के सिर पर मच्छरों का एक जत्था आ कर मँडराने लगा। कूकर ने सीटी बजाई। छोटी भाभी ने वहीं से बताया कि खाना पक गया है। वह अब्बा को इतिला करने के लिए उठा। अम्मी ने कहा, "अभी लौटकर ज़रा सुनना बेटे।"

वह लौट कर आया और सवालिया नज़रों से अम्मी को ताकने लगा। वह कुछ देर ख़ामोश रहीं, फिर फुसफुसाकर बोलीं, "जरा बाहर देख, कोई खड़ा तो नहीं है।" उसने बाहर झाँककर बताया, "नहीं।" वे पास खिसक आयीं, "मुजाहिद कल अपने नाना को दुकान से कुछ रुपए दे आना! और देखो, अब्बा से बचाकार जाना। वर्ना तेरे नाना और

हम दोनों में से कोई ज़िंदा न बचेगा।" वाक्य पूरा करते-करते उनके चेहरे पर ख़ौफ़ की पर्त जम गई।

बाहर से आकर नौकर ने मुजाहिद से कहा, "साहेब तुमको बुलाय रहे हैं।"

वह पहुँचा तो अब्बा हीटर से हाथ-पाँव सेंक रहे थे।

"कल की मजलिस की याद है?"

"जी।"

"जाइए।" वे पुनः एकाग्र होकर हीटर तापने लगे।

वह खा-पीकर सोने चला तो क़रीब बारह बजने वाले थे। पाँच कमरे एक क़तार में बने थे। पहला बड़ी भाभी का। दूसरा अम्मी का। तीसरा छोटी भाभी का। चौथा मुजाहिद का और पाँचवाँ फ़ाकिर का।

वह चारपाई पर लेटा, तब उसे दिन भर की थकान का अहसास हुआ। गोया उसकी नफ़्सें अब तक सो रही थीं।

अम्मी, फ़ाकिर, बड़ी भाभी के कमरों की बत्ती बुझी थी। उसने भी बुझा दी। लेटने को हुआ कि भाभी का रोना और चीख़ना सुनाई पड़ा। ताहिर भाई हर दिन की तरह आज भी शराब के नशे में धुत आए थे। भाभी को लात-घूँसे भयानक रुप में पड़ रहे थे। वे जितनी तेज़ आवाज़ में रोतीं, ताहिर भाई की गालियाँ उतनी तेज़ हो जातीं। नशे के सरुर में वे तस्करी की गोपनीय बातें भी बक देते थे।

वह इन सबसे अन्यमनस्क सोने की कोशिश करने लगा।

भाभी का रुदन धीरे-धीरे सिसकियों मे बदल गया और उसकी भी पलकें भारी होती गईं।

वह एक-डेढ़ घंटे ही सो सका होगा कि कालबेल की घनघहाहट ने नींद तोड़ दी। उसने खिड़की से देखा, बड़ी भाभी चप्पल घिसटाती हुई दरवाज़ा खोलने जा रही थीं।

छोटी भाभी के कमरे से अभी भी सिसकियाँ सुनाई पड़ रही थीं।

सुबह फजर की नमाज़ ने मुजाहिद की आँखें खोल दीं। रजाई से बाहर निकलने को मन न हो रहा था पर भीतर रहना मुमकिन न था। वह बाहर निकला। अम्मी के कमरे

में अब्बा आदमक़द शीशे के सामने स्टूल पर बैठ कर दाढ़ी में चमचमाहट और मुलायमियत लाने के लिए कोई क्रीम लगा रहे थे। वह कुछ आलस्य, कुछ मौज में आकर ठहर गया। उन्होंने तेल की शीशी खोली। उसके नथुनों में तेज़ ख़ुशबू समा गई। तेल लगाने के बाद वह दाढ़ी व सिर के बालों में कंघी करने लगे। बाद में कंघा उल्टा कर कई बार बालों को दबाया। कपड़े पहनकर ऊपर में सेंट छिड़का। फिर सिर में टोपी और पैरों में चप्पल डालकर खड़े होकर आइने में ख़ुद को निहारने लगे। देर होने लगी तो मुजाहिद आगे बढ़ गया था।

दिशा-मैदान से फारिग होकर वह बाहर लान में आया और एक किनारे कुर्सी डाल कर धूप खाने लगा। पास ही माली कैंची से घास को बराबर कर रहा।

दूर दीवार से सटा कर कुछ बेंचें रखी थीं, जिन पर खस्ताहाल लोग बैठे थे। मुजाहिद से थोड़े फ़ासले पर अब्बा दो लोगों के साथ धूप खा रहे थे। नाश्ता कर रहे थे। और बतिया रहे थे। वह दोनों को पहचानता था। एक एम.पी. रामजिवान पांडे थे।
धोती-कुर्ता-सदरी पहने थे। सदरी की जेबें पेनों से ठसीं थीं और उँगलियाँ अँगूठियों से। कभी अब्बा उनके सामने झुक कर घिघियाने लगते और कभी वह अब्बा से सामने झुककर दाँत चियाँरते। दूसरा आदमी सेल्स टैक्स अफ़सर था।

नौकर चाय,नाश्ता और तिपाई एक साथ ले आए। मुजाहिद नाश्ता करने लगा। अंडे का हलुवा और शाही टुकड़ा पसंद आ रहा था।

पांडेजी अब्बा को सुना-सुना कर अफ़सर को लताड़ रहे थे। अफ़सर की घिघ्घी बँध गई थी। अब्बा अकड़कर आँखें स्थिर किये हुए निर्विकार भाव से दाढ़ी पर हाथ फेरे जा रहे थे।

अंडे का हलुवा और शाही टुकड़ा समाप्त करने के बाद वह आमलेट पर जुट गया। साथ ही चाय भी सुड़क रहा था।

कुछ बकरियाँ लान में घुसने लगी थीं। अब्बा के चहेते कुत्ते टोनी ने भूँक कर भगा दिया।

उसने ख़स्ताहाल लोगों को देखा तो उसे अब्बा का दबदबा याद आने लगा। उसने घड़ी देखी, पौने नौ बज रहे थे वह उठ खड़ा हुआ। दुकान की चाभी लेने भीतर चला गया।

लौटने लगा तो अम्मी ने फुसफुसाकर कहा, "वो नाना वाली बात याद रखना।"

इतवार बंदी का दिन होता। मुजाहिद लखनऊ सामान लाने उसी दिन जाता। वहाँ माल ख़रीद कर बुक करा देता। पिछली बार का माल आया था। उन्हीं सामानों पर दाम चढ़ा रहा था। जब उसने पहली बार यह काम किया तो आँखें फैल गई थीं, इतना मुनाफा। फिर अब्बा का व्यापार का तरीका ही दूसरा था। वे दाम ज़्यादा रखवाते और यह मशहूर कर रखा था कि सारे शहर के दुकानदार नक़ली माल बेचते हैं। उनके यहाँ पैसा ज़रुर ज़्यादा लगता है; मगर सामान सही मिलता है। जबकि मुजाहिद भी सामान और लोगों की तरह ही लाता था।

दाम लिखते-लिखते उसकी उँगलियाँ दर्द करने लगीं।...महीने का आख़िरी हफ़्ता था। 'मद्दी' का समय। 'चटकी' तो पहले हफ़्ते में या लगन में होती है। लगन शुरु होनेवाली थी। इसलिए उसे तकरीबन हर इतवार को लखनऊ सामान लाने जाना पड़ रहा था। अब्बा की सख़्त हिदायत थी कि जितना सामान ज़मा कर सको कर लो। लगन में मनमाना बिकेगा।

वह उँगलियाँ चटकाने लगा। कुछ मन भी उचाट हो गया। आजकल वह अक्सर घबड़ा उठता था। बात यह थी कि गाँव में ज़ायदाद ख़तरे में थी। वहाँ दो-ढाई सौ बीघे खेत थे। सब ठीक चल रहा था। मगर मज़दूर इन दिनों बाग़ी हो गए थे। उसी में कुछ झगड़ा-फ़साद भी एकाध बार हो गया था।

तो भी अब्बा करीब दो दर्जन मुक़दमे लड़ रहे थे। वे रोज़ ही कचहरी पहुँचते रहते। घर में भी फ़ाइलों से मगज़पच्ची करते रहते। मुक़दमेबाज़ी के कारण कई बार फ़ौजदारी भी हुई। उसका भी मुक़दमा बना।

वह अटैची पर दाम चढ़ा ही रहा था कि रफ़ीक मियाँ भी अपना अटखर-बटखर लेकर पहुँचे और सड़क की पटरी पर जम गए। लगे बाँसुरी बजाने।

वह चिढ़ गया। उसे रफ़ीक़ मियाँ से नफ़रत सी होने लगी। इस बात को वह समझ नहीं पाया कि क्यों उसे नफ़रत हो रही है।

तभी रफ़ीक़ मियाँ उसकी घृणा से बेख़बर एक आदमी लेकर उसके पास आए और बोले, "अरे शाहज़ादे, इसका भी काम करा दो।" वह छोटे क़द का काला-काला मरियल-सा आदमी था। उसकी तीन बीघें ज़मीन पर अब्बा ने अपना दावा ठोंक दिया था। मुक़दमा चल रहा था।

रफ़ीक़ मिया को लगा, मुजाहिद ने उनकी बात सुनी नहीं, उन्होंने दुबारा सिफ़ारिश की।

वह अब्बा के मामले में अपनी औक़ात जानता था फिर भी उसने रफ़ीक़ मियाँ पर रोब झाड़ लेना बुरा नहीं समझा, "चल हट यहाँ से। अभी 'गल्ला' भी न खुला और आ गया मनहूस चेहरा लेकर।" वह भुनभुनाने लगा, "एक से एक फटीचर चले आते हैं साले।"

रफ़ीक़ मियाँ बड़ी उम्मीद लेकर पैरवी करने आए थे किंतु दोस्त के सामने ही बेइज़्ज़ती ने उन्हें हिलाकर रख दिया। वे बदहवास से, कुछ डरे दिल से अपनी 'दुकान' की तरफ़ बढ़ गए।

उसने दाम चढ़ाना ख़त्म किया। अगरबत्तियाँ सुलगाईं और तीन-चार शीशों में मढ़ी क़ुरान की आयतों में खोंस दीं। बीरु चाय वाले को स्पेशल का आर्डर दिया और ग्राहकों में रम गया। ग्राहक आने शुरु हो गए थे।

वह तेज़-तेज़ घर की ओर चलने लगा। घर पर आज मजलिस थी। वह साधारण मजलिस न थी। इसकी अहमियत थी। तकरीर करने के लिए जोगीपुरा से इमाम आए थे। और यहाँ शहर के सभी नामी-गिरानी लोग इकठ्टा होने वाले थे।

घर अभी दो फ़र्लांग था। अँधेरा शुरु हो गया। एक अजीब बात थी उसके शानदार मकान के इर्द-गिर्द टूटे-फूटे खपरैल या झोपड़े थे। जैसे बरगद के विशाल दरख़्त के नीचे कोई पौधा नहीं पनपता। जहाँ उसका मकान चमचमाता रहता था। वहीं आस-पास के घर कोढ़ी जैसे लगते थे।

वह पत्थरों पर पैर रख कर चलने लगा। नालियों का पानी बहकर रास्ते में आ गया था। अब्बा ने इस जहमत से बचने के लिए थोड़ी-थोड़ी दूरी पर चौड़े-चौड़े पत्थर रखवा दिए थे।

मकान को देखकर उसकी तबीयत खुश हो गई। छत से लेकर फ़र्श तक सभी दीवारों को लाल-पीली झालरों से सजाया गया था। इमामबाड़ा खोल दिया गया था। भीनी-भीनी महक आ रही थी। अंदर सेहरा पहने पंजों से खूबसूरती में चार चाँद लग गए थे। मिबंर ऐसा था कि देखने वाले की नज़रें अनायस उस पर पड़ जातीं। वह अंदर जाने वाला था कि नाना के दुकान के बग़ल वाली मस्जिद के मौलवी साहब लपककर आए। वे ज़ुबान में शहद घोल कर बोले, "ज़रा अपनी बड़ी भाभी को मेरे आने की ख़बर कर देना।" कहने के बाद उनके हाथों में पड़ी पुड़िया कस उठी। वह घुट कर रह गया।

वह जानता थी कि बड़ी भाभी ने यह पुड़िया क्यों मँगाई। उनका कोई माशूक होगा जो उनके मुरझाए चेहरे से मुतअसर न होता होगा। उसी को फँकाकर वश में करने के लिए उन्होंने मौलवी साहब से नज़र की हुई चीनी मंगाई होगी।

मुजाहिद उफ़न रहा था। कुछ तो दुकानदारी तेज़ न होने की कचोट थी और कुछ अम्मी की तकलीफ़ का दुःख। अम्मी नामालुम क्यों हमेशा बुझी-बुझी रहतीं। उनमें जैसे दर्द का कोई समंदर घुमड़ता रहता हो। वे बाज वक़्त आँखों पर बाँहें डाले घंटों पड़ी रहतीं।

रफ़ीक़ मियाँ बाँसुरी बजाने में तल्लीन थे। आँखें झपकाते हुए बाजार चले जा रहे थे। उनके आस-पास काफ़ी मजमा इकठ्टा हो गया था।

मजमें को देख-देख वह और उफ़नता। हालाँकि वह भली-भाँति जानता था कि इनमें से एक भी बाँसुरी ख़रीदेगा नहीं। फिर भी उसे रफ़ीक़ मियाँ से डाह हो रही थी।

रफ़ीक़ मियाँ का लड़का खाना लेकर आया। उन्होंने बाँसुरी बजाना बंद कर दिया। लोग छँटने लगे। रफ़ीक़ मियाँ ने हाथ-मुँह धोया। फिर खंभे की ओट करके खाना खाने लगे। वे धीरे-धीरे खा रहे थे। लड़का प्याज छील रहा था...।

मुजाहिद ने राहत की साँस ली। जैसे दुश्मन ने कनपटी से पिस्तौल हटा ली हो। उसने फ़ाकिर से कहा कि घूमना चाहे तो घूम आए। फ़ाकिर ख़ुश होकर बाहर निकल गया। वह उसे ओझल होने तक देखता रहा।

लड़का प्याज धोकर लेने लगा तो मुस्कराते हुए जाने क्या भुनभुनाया कि रफ़ीक़ मियाँ 'हरामी अब बता रहा है।' चिल्लाते हुए फ़ुर्ती से उठे। हड़बड़ाहट में खाने की थाली उनके पैरों से लगी। ज़ोरों की झनझनाहट हुई, भात और बैंगन का चोखा छितरा गया। वे बेहोश से भागे-भागे मुजाहिद के पास आए। उनका चेहरा फ़क और होंठ सफेद पड़ गए थे। वे ख़ौफ़ज़दा थे उन्होंने पल भर में सब कह डाला। यह भी बताया था कि उसके अब्बा को मार डालने के बाद वे लोग अब उसके पास आ रहे हैं।

उसने बिजली-सी रफ़्तार से सामान भीतर कर डाला, एक तौलिया लेने के बाद लपटकर शटर गिराया और ताले बंद किए। तौलिया से आनन-फानन में सिर और मुँह लपेटा, कोट का कालर खड़ा किया। लुकते-छिपते गलियाँ पार करने लगा।

मारने वालों ने तो अपनी तरफ़ से मार ही डाला था लेकिन वह बच गए थे। बाहर लान में ही वे चारपाई पर लिटाए गए थे। पहली बार घर की जनाना लोगों ने पर्दा तोड़ा था।

ऐसा लगता था कि लोगों ने पहले लात-घूँसों और जूतों से मारा था फिर चाक़ू से वार किया था। पाँच बार चाक़ू से वार किया गया था। ख़ून से भीगे हुए थे मीर साहब। बीच-बीच में हिला देने वाली आवाज़ में चिल्ला उठते थे।

वे गाँव गए थे। वहीं अपने खेत में काम करने वाले मज़दूरों को किसी बात पर पीटना शुरु कर दिया था। मज़दूरों ने भी रोष में कुछ गाली-गलौज किया। इसी बात पर उनका ग़ुस्सा बेक़ाबू हो गया। उन्होंने एक बूढ़े मज़दूर के पेट में अपनी चमकती गुप्ती भोंक दी। बस यहीं से क़यामत शुरु हो गई। शायद मीर साहब को यह इलहाम न था कि मज़दूर इस कदर हमलावर हो जाएंगे।

पके बाल वाले डॉक्टर ने अन्य दो डॉक्टरों से मशविरा करके कोई दवा मीर साहब को पिलाई। उनका कहराना धीमा होने लगा।

शहर की हस्तियों का आना-जाना शुरु हो गया था। क्या शिया, क्या सुन्नी और क्या हिंदू-सभी इज़्ज़तदार और ओहदेदार लोग भागते चले आ रहे थे। लम्हा भर में कारों, स्कूटरों की लंबी क़तार लग गई।

मीर साहब ने धीरे से गरदन हिलाई। उन्होंने इशारा किया, जनाना लोग भीतर चली जाएँ।

लान खचाखच भरा था। हरी-हरी घासें बड़ी बेरहमी से कुचली जा रही थीं। लोग अलग-अलग टुकड़ों में बँट गए थे। धीरे-धीरे बातचीत भी होने लगी थी। मीर साहब के लड़कों मे भयावह बेचैनी घुमड़ रही थी।

मीर साहब ज़ोर से चिंघाड़े, फिर दर्द से छटपटाने लगे। उनकी आँखों में मौत की दहशत और तकलीफ़ का बियावान दिख रहा था।

डॉक्टरों ने मीर साहब का दुबारा मुआइना किया। वे हताश दिखाई पड़े। हिचकते हुए उन्होंने लड़कों से कहा, "इन्हें लखनऊ ले जाना पड़ेगा।"

ज़ाहिद के मुँह से बेसाख्ता निकला, "पर पुलिस की कारवाई तो अभी...।"

एम.पी.रामजियान बीच में ही तपाक से बोल पड़े। "वो मैं देख लूँगा।"

फ़ाकिर अभी छोटा था। उसका अब्बा को ले जाने का सवाल नहीं उठता था। बाक़ी तीनों भाई मुँह चुराने लगे। सभी के मन में था, जाना ख़तरे से ख़ाली नहीं, अब्बा रास्ते में मर जाएँ और इधर घर में क़ीमती सामान दूसरे भाई, अम्मी लोग हड़प लें।

मुजाहिद के मन में एक बार आया कि वही अब्बा को लेकर लखनऊ चले। वह उनकी औलाद है। मगर हक़ीक़त ने उसके इस इरादे को मंसूख कर दिया। उसने दूसरे भाइयों के बारे में सोचा तो पाया कि उसका अब्बा के साथ जाना ठीक नहीं। उसने मन ही मन कहा, "इन लोगों की कम-अज-कम बीवी लोग यहाँ रहेंगी। मेरे लिए कौन होगा?"

उसने दृढ़ता के साथ तय किया, वह नहीं जाएगा। किसी भी सूरत में नहीं जाएगा।

यह निश्चय करने के बाद वह बचने के लिए अंदर चला आया।

भीतर आँगन में बैठी हुई अम्मी एकटक आसमान ताक रही थीं। दोनों भाभी किसी चीज़ के इंतज़ार में मुस्तैदी से व्यग्र थीं।

https://www.hindiadda.com/sone-ka-chaakoo/